हमारी सांस्कृतिक विरासत में खेल एवं मनोरंजन

डॉ0 आशीष प्रताप सिंह*

सार

प्रकृति में क्रीड़ा एवं मनोरंजन सार्वभौम है। मनुष्य का यह स्वाभाविक गुण है जो बचपन से ही विद्यमान रहता है। क्रीड़ा एवं मनोरंजन की गतिविधियां बालक के विकास तथा वृद्धि में सीधे प्रभाव डालती हैं। इसमें कल्पनाशक्ति का बहुत अधिक समावेश होता है। हम बालक की इस कल्पनाशक्ति का उसके द्वारा खिलौने से खेलते हुए, उसको तोड़कर पुनः अपनी कल्पना से जोड़े जाने की क्रिया करते हुए अवलोकन कर सकते हैं। कोई बालक अपने विकास की प्रारम्भिक अवस्था में यदि क्रीड़ा एवं मनोरंजन में भाग नहीं लेता तो इसका मतलब यह होगा कि उसके साथ कोई समस्या है और उसका ऐसा व्यवहार उसकी सामान्य वृद्धि तथा विकास की गति की शैली से उसे परे हटाता है। उसका यह व्यवहार आगे चलकर उसके व्यक्तित्व के विकास, सामान्य व्यवहार तथा समाज में घुलने मिलने में अनगिनत समस्याएं पैदा करता है। यही कारण है कि क्रीड़ा एवं मनोरंजन हमारी सांस्कृतिक विरासत के अटूट अंग हैं। यह हमारी सांस्कृतिक सभ्यता के जन्म एवं सामाजिक विकास के फैलाव को प्रभावित करते हैं। हमारे पूर्वजों ने प्रत्येक के लिये खुशहाली के मूलभूत और मूल्यवान उद्देश्य के रूप में क्रीड़ा एवं मनोरंजन की महत्ता को पहचाना। वास्तव में जीवन इनके अभाव में नीरस है।

प्रस्तावना

क्रीड़ा एवं मनोरंजन व्यक्ति के व्यस्त जीवन के मध्य संतुलन बनाते हैं। ये हमें अपनी जिम्मेदारियों को वहन करने के लिये तरोताजा रखते हैं। क्रीड़ा एवं मनोरंजन मस्तिष्क तथा शरीर के लिये ऐसा श्रम है जो हमें प्रसन्नता के उस मुकाम तक पहुंचाते हैं जिसका कोई अन्त नहीं है। ये प्रसन्नतादायक, स्वप्रेरक, क्रियाशील गतिविधियां हैं, जिनमें व्यक्ति विशेष को अभिव्यक्ति का पूर्ण अवसर प्राप्त होता है। क्रीड़ा एवं मनोरंजन प्राचीन काल से सामाजीकरण की आधारशिला रहे हैं। प्राचीन भारत में क्रीड़ा एवं मनोरंजन का सम्बन्ध धर्मशास्त्र से हैं। धर्मशास्त्र में आत्मा, परमात्मा, मोक्ष, कर्तव्य आदि की विवेचना होती है। काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि षड्रिपुओं पर विजय प्राप्त करने की चर्चा होती है। ये सब खिलाड़ियों के लिये भी अत्यन्त आवश्यक है। गीता में कर्तव्य पालन का उपदेश दिया गया है। 'आत्मज्ञान विद्धि' धर्मशास्त्र कहते हैं कि अपने को जानो। अतः खिलाड़ियों के लिये भी आवश्यक रहता था कि वे आत्मज्ञान प्राप्त करें। प्राचीन भारत के लोक जीवन के लिये गृहस्थाश्रम में विषयों का सुख लेने की अनुमति दी जाती थी, जिससे जीवशास्त्रीय आवश्यकता की पूर्ति होने से स्वास्थ्य वृद्धि में सहायता मिलती थी। आरम्भ से ही ब्रह्मचर्य का अयुर्वेदिक महत्व समझा गया था। वर्णाश्रम व्यवस्था में ब्रह्मचर्य की इस भांति योजना की गयी थी कि इसका पालन करने से कोई भी व्यक्ति स्वस्थ रह सकता था। वैदिक काल से ही 'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाहनत्' की मान्यता समाज में प्रचलित थी। अनेक वीर मल्ल योद्धा इसका समुचित पालन करते थे। प्राचीन भारत में बाली, हनुमान, श्रीकृष्ण, बलराम, कंस, जरासंध और भीम आदि अनेक नामी पहलवान खिलाड़ी हुए हैं। इनकी शैलियों हनुमती, कंसी, जरासंधी और भीमी आदि नाम से प्रचलित रही है। प्राचीन सभ्यता में, विशेषतया भारत की मोहनजोदड़ो सभ्यता में, ईसा पूर्व 2500 वर्ष में तरण–तालों की व्यवस्था थी, जहां दर्शकों के बैठने का प्रबन्ध था। स्पष्ट है उस काल में तैराकी मुकाबलों का बड़ा जोर रहा होगा। आर्य लोग नदियों के किनारे बसे थे और तैरने में कुशल होते थे। कबड्डी भारत के कोने–कोने में आदिकाल से खेला जा रहा है। कबड्डी हमारे राष्ट्रीय गौरब के इतिहास का साक्षी है। यह हमारा मूल भारतीय खेल है। कबड्डी महाभारत काल में 'एक–श्वास' नाम से प्रचलित था।

ऐतिहासिक सर्वेक्षण

क्रीड़ा एवं मनोरंजन का उद्भव मानव संस्कृति एवं सभ्यता के आविर्भाव एवं विकास के साथ–साथ हुआ। ऋग्वेद (10.146.2., 1.28.5) में स्वस्थ रहकर दीर्घायु की कामना की गई है। आयुर्वेद मानव के पूर्ण देहमानस स्वास्थ्य पर बल देता है। चरक ने खेल से प्राप्त शक्ति को ही बल की संज्ञा दी

* असि0 प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा, का.सु. साकेत पी.जी. कालेज, अयोध्या, फैजाबाद

थी (चरक, संहिता, सूत्र 11.25)। यही कारण है कि हमारे ऋषियों ने क्रीड़ा एवं मनोरंजन, खेलकूद, आखेट, घुड़दौड़ आदि प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित थे।

प्राचीन भारत में नागरिकों के मनोरंजनार्थ खेलों का आयोजन सामूहिक रूप से करने के उल्लेख प्राप्त होते हैं। खेल के दर्शनार्थ एकत्र जनसमुदाय को 'समाज' कहा जाता था, जिसमें स्त्री–पुरुष सभी भाग लेते थे। एक जातक (6.277) से विदित होता है कि 'समाज' में सम्मिलित होने वाले स्त्री–पुरुष पंक्तियों मे बैठे थे। इस प्रकार के 'समाज' का आयेाजन महाभारत में अनेक बार हुआ (समवाये ततो राज्ञाम्, महाभारत, आदिपर्व)। जिस स्थान पर क्रीड़ोत्सव मनाया जाता था उसे 'समज्या' कहते थे। महाभाष्य तथा काशिका में 'समवाय' शब्द का भी उल्लेख प्राप्त होता है, जो समाज के अर्थ में प्रचलित था। पाणिनी ने जनसमूह एकत्र होने के अवसरों के लिये 'समवाय' शब्द प्रयुक्त किया है।

पूर्ववैदिक युग के लोगों का जीवन अत्यन्त सुखी और समृद्ध था। खेल एवं मनोरंजन के लिये वे 'समन' और 'उत्सव' का आयोजन करते थे। नृत्य, गान और वाद्व के माध्यम से सभी नर–नारी मनोरंजन करते थे। आर्य संगीत एवं खेल प्रेमी थे। वीणा, करतल, दुंदुभी, शेख, कर्करी, वण, नाड़ी, आघाट, मृदंग आदि अनेक प्रकार के वाद्यों का प्रयोग होता था (ऋग्वेद, 2.43.3, 10.32.4, 10.135.7)। वेदों की ऋषियों को वे लयपर्वक गाते थे। गायन का सबसे प्रबल प्रमाण 'सामवेद' है। ऋग्वेद काल के लोग मल्लयुद्ध के साथ–साथ घुड़दौड़ और 'रथदौड़' में भी सम्मिलत होते थे (ऋग्वेद 5.37.7, 8.41.44, 8.80.8)। दौड़ के लिये 'अजि' दौड़ मैदान के लिये 'काष्ठा' या 'सत्य' पासे की क्रीड़ा के लिये 'अक्ष' का उल्लेख मिलता है। द्यूतक्रीड़ा होती थी। कभी–कभी द्यूतक्रीड़ा के फलस्वरूप लोग दास तक बन जाते थे (पितेव कितवं शशात्य, –ऋग्वेद, 5.37.7, 2.2.5)। उत्तर वैदिक काल में आकर क्रीड़ा एवं मनोरंजन का क्षेत्र विस्तृत हुआ। आखेट, घुड़दौड़ और रथदौड़ खेल एवं मनोरंजन के प्रधान अंग बने। घरेलू खेलों में पासे अथवा चौपड़ का खेल अधिक जनप्रिय बना। संगीत और नृत्य का विकास हुआ। संगीतज्ञ पुरुष–स्त्रियों के आकर्षण के केन्द्र थे। पाणिनी काल तक आकर समाज में क्रीड़ा एवं मनोरंजन के क्षेत्र में मल्लयुद्ध, उद्यान–क्रीड़ा, मृगया आदि की बड़ी प्रतिस्पर्द्धाओं का विस्तार हुआ (अष्टाध्यायी, 3.3.36.40, 4.2.57, 6.2. 74)। रामायण और महाभारत में मृगया का खेल बड़े चाव से खेला जाता था। पासे की क्रीड़ा में पांडवों को अपना सब कुछ गवां देना पड़ा। समाज में वाद्य, नृत्य और गान का बहुत अधिक प्रचलन हो गया। कौटिल्य ने अनेक प्रकार के प्रेक्षाओं (क्रीड़ओं) से सम्बद्ध लोगों का वर्णन किया है, जो मनोरंजन करके जीवन–यापन करते थे, यथा– नट, नर्तक, गायक, वादक, वाग्जीवन, कुशीलव, प्लवक, सौमिक, चारण (नटनर्तकगायकवादकबाग्जीवनकुशीलवप्लवकसौमिकचारण। अर्थशास्त्र 2.27)। पजंजलि ने मृगया, प्रहरण–क्रीड़ा, मल्ल–विद्या, पुश्पावचय, उद्यान–क्रीड़ा, आपान–गोष्ठी, द्युत–क्रीड़ा आदि क्रीडाओं का वर्णन किया है, जो तत्कालीन समाज में प्रचलित थे (महाभाष्य, 1.1.50, 68, 3.1.56, 5.4.126)। गुप्त–युग तक समाज में खेल एवं मनोरंजन के कई साधन विकसित हो चुके थे। समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य, कुमारगुप्त आदि गुप्त सम्राटों के सिक्कों पर व्याघ्र–आखेट के चित्र आंकित किये गए हैं। पुराणों में मृगया के अनेक उललेख मिलते हैं (विष्णुपुराण, 4.1.30, 4.4.40–42)। रघुवंश शकुन्तलम् में झुले का उल्लेख मिलता है (रघुवंश, 9.69, शाकुन्तलम, अंक 1)। श्रीकृष्ण नाना प्रकार की क्रीड़ा करते हुए झूला भी झूलते थे। खेल एवं मनोरंजन के क्षेत्र में मल्लयुद्ध, जलक्रीड़ा, नाटक आदि के उल्लेख मिलते हैं। भरतमुनि द्वारा जलक्रीड़ा, नाटक आदि के उल्लेख मिलते हैं। भरतमुनि द्वारा लिखित 'लक्ष्मी–स्वयंवर' नाटक अभिनीत किये जाने का उल्लेख मिलता है (मत्स्यपुराण, 24.28–31)। विजय अथवा अन्य सुखद समाचार प्राप्त होने पर महोत्सव मनाया जाता था, जिसमें संगीत, नृत्य, गान आदि के साथ–साथ विविध खेलों का आयोजन किया जाता था। कुसुमपुर (पाटलिपुत्र में कौमुदी–महोत्सव मनाये जाने का उल्लेख मिलता है (मुद्राराक्षस, अंक 3)। वाव्स्यायन ने तो खेल एवं मनोरंजन, संगीत एवं नृत्य का ज्ञान सबके लिये अवश्यक बताया है (कामसूत्र, पृ. 52) श्वानच्वांग ने इन्द्रजाल का वर्णन किया है। अलबीरूनी, याकूबी और मसूदी जैसे अरब लेखकों ने भारत में प्रचलित खेल एवं मनोरंजनों को उल्लेख अपने ग्रन्थों में किया है।

आधुनिक भारत में खेल

आधुनिक खेलों का बीसवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध से अभूतपूर्व विकास हुआ। प्राचीन खेलों के साथ नवीन खेलों का भारत में पदार्पण हुआ। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में अंग्रेजी सभ्यता का इतना असर हो गया था कि भारत के पढ़े–लिखे माने जाने वाले लोगों ने प्राचीन खेलों द्वन्द्व क्रीड़ा, कुश्ती, तैराकी, कबड्डी के साथ आधुनिक खेलों जैसे बैडमिन्टन, बास्केटबाल, क्रिकेट, फुटबाल, हाकी, बालीबाल, टेबिल टेनिस आदि को खेलना शुरू किया। इंग्लैंड की तरह यहाँ भी खेल क्लबों का आविर्भाव हुआ। आज भारत ने आधुनिक खेलों में अपना वर्चस्व कायम किया है और राष्ट्रीय मुकाबलों के साथ–साथ विश्व चैम्पियनशिप का आयोजन हो रहा है।

विश्व के सबसे भव्य और सबसे रंगीन खेल समारोह 'ओलम्पिक में भारत ने प्रवेश किया। खेलों में सफलता राष्ट्रीय सफलता के समानार्थक बनी। विश्व स्तरीय खेल प्रतियोगिता ओलम्पिक में भारत ने एमस्टरडम (1928) में पहली बार हाकी में भाग लिया और खूल सफलता पाई। अद्‌भुत जादूगरी दिखा भारतीय हाकी टीम ने ओलम्पिक स्वर्ण पदक जीत लिया। इस विजय के कारण भारत में ओलम्पिक खेलों की लोकप्रियता भी बढ़ी। भारतीय खिलाड़ी ध्यानचन्द की आश्चर्यजनक चुस्ती, चपलता तथा कौशल ने विश्व में अपना स्थान कायम किया।

स्वतन्त्रतोपरान्त भारत में एशियाई खेलों का मार्च 1951 में आयोजन हुआ। बीसवीं शताब्दी में द्वितीय विश्व–युद्ध की विभीषिका से झुलसे राष्टञ एक ही मंच और ध्वज के नीचे एकत्र होने के लिए सहमत हुए और पहले एशियाड खेलों के लिए राजपथ के पास 600 एकड़ भूमि पर आठ लाख रूपये की लागत ने नेशनल स्टेडियम का निर्माण किया गया। एथलैटिक्स प्रतियोगिता के लिए आठ सिण्डर ट्रैक विशेष रूप से इस स्टेडियम में तैयार किए गए। हाकी और फुटबाल के लिए भी स्टेडियम का उपयोग हो सके, इस कारण हरी दूबे को रोपा गया। इस स्टेडियम की कुल दर्शक–क्षमता 30,000 थी। 4 मार्च 1951 को एशिया में एक अभिनव खेल क्रान्ति का अभ्युदय हो गया, जब भारतीय गणतंत्र के प्रथम राष्ट्रपति महामहिम स्व0 डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने एशियाई खेलों के शुभारम्भ की घोषणा की। इसी अवसर पर पं. नेहरू ने अपना मशहूर वक्तव्य या कहिए कि खिलाड़ियों को अमूल्य मन्त्र दिया था–खेलों को खेलों की भावना से खेलो। एशियाई देशों के खिलाड़ियों को एक ंच पर लाने का यह सबसे बड़ा और सुव्यवस्थित आयोजन था। इससे पूर्व कभी भी इतनी अधिक संख्या में एशियाई प्रतियोगी एक मंच पर एकत्र नहीं हुए थे। इन खेलों में 11 देशों के लगभग 500 खिलाड़ियों ने छः प्रतियोगिताओं एथलैटिक्स, तैराकी, भारोत्तेलन,ख साइकलिंग, फुटबाल और बास्केटबाल में भाग लिया। इसमें 28 स्वर्ण, 20 रजत और 16 कांस्य–पदक जीतकर जापानी खिलाड़ियों ने न केवल पहला स्थान प्राप्त किया अपितु अपनी श्रेष्ठता की धाक भी कायम की। भारत का प्रदर्शन भी उत्साहवर्द्धक रहा। 15 स्वर्ण, 16 रजत और 21 कांस्य पदकों के साथ भारत का स्थान दूसरा रहा। इन खेलों में बास्केटबाल को छोड़कर ऐसी कोई खेल प्रतियोगिता नहीं बची जिसमें भारतीय खिलाड़ियों ने कोई–न–कोई पदक न जीता हो। तब से अनवरत भारत खेलों के विकास में अपनी नीतियों के तहत नई मंजिलों को तय करता आ रहा है।

वर्तमान में सरकार भी खेलों पर विशेष ध्यान दे रही है। खेलों की बुनियादी सुविधाँए उपलब्ध कराने और उनमें सुधार लाने के उद्‌देश्य से केन्द्र सरकार राज्य सरकारों और राज्यों की खेल परिषदों आदि के प्रयासों में सहायता करती रही है। स्टेडियम, तरणतालों, व्यायामशालाओं तथा खेल परिसरों के निर्माण के लिए अनुदान दिया जाता है। प्रायः केन्द्र और सम्बन्धित राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों के बीच 50:50 के अनुपात में वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है। पर्वतीय आदिवासी क्षेत्रों के लिए केन्द्रीय सहायता 75 प्रतिशत है, जो निर्धारित अधिकतम सीमा तक हो सकती है। राज्य/केन्द्रशासित प्रशासन भी अपने स्कूलों में कुछ सुविधाओं के निर्माण/सुधार के लिए पांच लाख रूपये की सहायता प्राप्त करने के पात्र है। विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में खेलों को प्रोत्साहन के लिए अनुदान देने की योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालयों/महाविद्यालयों को खेल के मैदानों के विकास इंडोर स्टेडियम/सुविधा के निर्माण के लिए सहायता दी जाती है। विशेष श्रेणी के राज्यों में सहायता का अनुपात 75:25 होता है। रचनात्मक कार्यों में लगाया जाए। भारत में युवाओं की संख्या कुल आबादी का 40 प्रतिशत है। यही कारण है कि भारत में खेल–विषयक गतिविधियों में तेजी लाने के लिए राष्ट्रीय खेल नीति 1984 में बनाई गई। खेलों

को बढ़ावा देने तथा प्रतिभाशाली युवाओं को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने वर्ष 2001 में नई राष्ट्रीय खेल नीति बनाई जिसका मुख्य उद्देश्य, 1. खेल के लिए खुली जगह तथा उपलब्धियों में श्रेष्ठता, 2. संसाधन का विकास तथा उत्थान, 3. राष्ट्रीय खेल फेडरेशनों और दूसरी उपयुक्त संस्थाओं को सहायता प्रदान करना, 4. खेल को वैज्ञानिक आधार पर प्रशिक्षण सुविधा को मजबूती प्रदान करना, 5. खिलाड़ियों को प्रोत्साहन, 6. महिलाओं, पिछड़ी जनजातियों तथा ग्रामीण युवाओं को बढ़ावा 7. खेलों के उत्थान में संगठित क्षेत्रों की भागीदारी एवं 8. जनता में खेलों के प्रति रूझान को बढ़ाना। वर्ष 2010 में नई दिल्ली में होने वाले राष्ट्रमण्डल खेलों की मेजबानी का दायित्व भारत का है। भारत इस दायित्व को बखूबी निभाना चाहता है। पिछले दिनों मेलबर्न में आयोजित खेलों के दौरान कॉनवेल्थ गेम्स 2010 के विज्ञापन पर ही 40 करोड़ रूपये खर्च किए गए। सरकार इस खेल के पहले दिल्ली को विश्व स्तर का शहर बनाने में जुटी है। विश्व भर में खेल प्रेमियों, खिलाड़ियों और अनुसंधाताओं की दृष्टि इन खेलों पर हैं ये खेल हमारे खेल इतिहास को विस्तृत आधार प्रदान करेंगे। ये खेल अब तक के सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रमण्डल खेल साबित होंगे।

संदर्भ :

1. मोहम्मद वाहिद एवं एन.के. दीक्षित (2006), **शारीरिक शिक्षा का इतिहास,** प्रकाशन केन्द्र, लखनऊ, पृ. 11.
2. एन.पी. शर्मा (2003) **शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त और इतिहास,** खेल साहित्य केन्द्र नई दिल्ली, पृ. 173.
3. अजमेर सिंह एवं अन्य (2002) **शारीरिक शिक्षा स्वास्थ्य एवं खेलों की आधुनिक पाठ्य पुस्तक,** कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना, पृ. 4–5.
4. लक्ष्मीकान्त पाण्डेय (1983) **भूले बिसरे खेल,** मेट्रोपोलिटन, नई दिल्ली, पृ. 10–12.
5. अजमेर सिंह एवं अन्य (2006) **शारीरिक शिक्षा तथा ओलम्पिक अभियान,** कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृ. 36.